कर्णाटकालीन मूर्त्तिकला

*प्रफूल्ल कुमार सिंह मौन**

पालयुग की कला का विकास एवं विस्तार कर्णाटकालीन तिरहुत और नेपाल में हुआ। ऐसा देखा जाता है कि इस काल में तिरहुत ने आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण उपलिब्धयाँ प्राप्त की। अतः तिरहुत के इतिहास में कर्णाट काल स्वर्णयुग की महत्ता आयत करता है[1]। कर्णाट से आये इन क्षत्रियों ने गंगा से उत्तर हिमालय के पाद प्रदेश में अपनी राजधानी सिमरौनगढ़ में (1097 ई॰) बनायी। कर्णाटवंशीय राजे सूर्यवंशीय क्षत्रिय एवं ब्राह्मण धर्मावलम्बी थे। उन्होंने ब्राह्मण धर्म और संस्कृत भाषा को संरक्षित किया। इस युग की ललित कलाओं में स्थापत्य, मूर्त्ति, काव्य, संगीत एवं चित्रकला ने काफी उन्नति की। कर्णाट शासकों (1097-1324 ई॰) को यह कला परम्परा पालों एवं सेनों से विरासत में मिली थी। अतः भारतीय कला परम्परा में कर्णाटों के योगदान का आकलन आवश्यक है।

तिरहुत में कर्णाट राजवंश की स्थापना नान्यदेव ने 1097 ई॰ में श्रावण शुक्ल सप्तमी शनिवार के दिन (शक संवत् 1019) सिद्धयोग, स्वाती नक्षत्र, सिंह लग्न में गढ़ का निर्माण कर की। इसकी पुष्टि नानपुर, जरहटिया एवं सिमरौनगढ़ के स्तंभ लेखों से होती है - ''नान्यदेव नृपतिः विदधीत वास्तुम्''।[2] तिरहुत के इतिहास में नान्यदेव को वही स्थान प्राप्त है जो भारतीय इतिहास में चन्द्रगुप्त मौर्य को है। विदेह में जनकवंश के बाद तिरहुत के इस कर्णाट राजवंश ने दो सौ सत्ताइस वर्षो (1097-1332 ई॰) तक शासन किया। इसका प्रभाव पश्चिम में गंडकी से पूर्व में कौशिकी तक तथा उत्तर में नेपाल-उपत्यका से दक्षिण में गंगा तट तक था। इस राजवंश के प्रतापी राजाओं में नान्यदेव, रामसिंह, हरसिंह देव आदि तथा मंत्रियों में श्रीधर, कर्मादित्य, चण्डेश्वर आदि की भूमिकाएँ महत्त्वपूर्ण रही हैं। उपेन्द्र ठाकुर, राधाकृष्ण चौधरी, योगेन्द्र मिश्र, सी॰ पी॰ एन॰ सिंह, मोहन प्रसाद खनाल, तारानंद मिश्र आदि ने कर्णाटों के योगदान का मूल्यांकन किया है। यहाँ कर्णाटकालीन मूर्त्तिकाल का अध्ययन अभिप्रेत है।

नान्यदेव द्वारा सिमरौनगढ़ में स्थापित वास्तु आदर्श की सूचना अभिलेखों में मिलती है, लेकिन

वास्तु आदर्श के अवशेष सिमरौनगढ़ के अलावा अन्धराठाढ़ी, भीठ भगवानपुर, तिलकेश्वर, बहेड़ा, कपिलेश्वर, हाबी, जरहटिया, मखनाहा, भुतही, देकुली आदि स्थलों में भी प्राप्त हैं। डॉ० रामनिवास पाण्डेय[3] के अनुसार सिमरौनगढ़ का नगर-दुर्ग चालिस वर्ग किलोमीटर में विस्तृत था। प्राचीर के भीतर कंकाली का मंदिर, भव्य दरबार, सज्जित अंत:पुर, द्यूतभवन, सैनिक छावनी आदि थी। तिब्वती धर्मयात्री[4] धर्मस्वामी के अनुसार राजमहल में ग्यारह बड़े-बड़े द्वार थे। तीन द्वार पूर्व, पश्चिम एवं दक्षिणाभिमुखी थे। ये द्वार खाइयों और वृक्षों से घिरे थे। द्वार के आगे सेतु बना था जहाँ द्वार रक्षकों की चौकसी रहती थी। आज सिमरौनगढ़ (नेपाल) में कंकाली मंदिर एवं परिसर में काले पत्थरों की बनी विष्णु, उमा-महेश्वर, आयुधपुरुष आदि की मूर्त्तियाँ, विशाल आयताकार पुष्करणी, रनिवास आदि में कर्णाटकालीन कला अवशिष्ट हैं। कर्णाट काल में बनी सिमरौनगढ़ की भव्य विष्णु प्रतिमाएँ विशिष्ट हैं। दो भुजाओं वाली विष्णु के लोकपाल स्वरूप की मूर्त्तियों की दुबली-पतली देह यष्टि को बारीक अलंकरण, कलात्मक तकनीकों से परिपूर्ण करते हुए भव्य रूप में प्रतिष्ठित किया गया है। उत्तर पाल कालीन मूर्त्तियों में अलंकारों एवं प्रभावली पर बारीक तथा आंतरिक सौन्दर्य के बदले वाह्य सौन्दर्य से चमत्कृत करने का सफल प्रयास किया गया है। सिमरौनगढ़ से प्राप्त लोकपाल विष्णु द. सबसे बड़ी काले पत्थर की प्रतिमा पाँच फीट की है।

सिमरौनगढ़ की दूसरी विशिष्ट प्रतिमा है उमा-माहेश्वर की। इस कर्णाटकालीन मूर्त्ति में चतुर्भुज शिव ललितासन में बैठे हैं और पार्वती उनकी बायीं जांघ पर बैठी है। शिव का एक हाथ पार्वती की ठुड्डी का स्पर्श कर रहा है, दूसरा हाथ पार्वती को आलिंगित करते हुए उसके बायें स्तन को छू रहा है। ऊपर की ओर उनके दाहिने हाथ में त्रिशूल है तथा बायाँ हाथ पीठ के पीछे है। मूर्त्ति के अधोभाग में शिव का वाहन बसहा और पार्वती के सिंह को मूर्त किया गया है। तारानन्द मिश्र ने सिमरौनगढ़ से प्राप्त एवं राष्ट्रीय संग्रहालय, काठमांडू में संरक्षित एक कर्णाटकालीन सूर्य मूर्त्ति का अध्ययन प्रस्तुत किया है। सात घोड़ों के रथ पर सवार इस सूर्य-मूर्त्ति के पादपीठ पर तिरहुता में एक अभिलेख उत्कीर्ण है। तदनुसार याज्ञिक श्रीपति के लिए महामंत्री गणेश से मूर्त्तिकार हरेश्वर ने इस का निर्माण किया। गणेश (गणेश्वर) को श्री मिश्र ने देवादित्य का पुत्र तथा शक्ति सिंह और हरसिंहदेव का महामंत्री कहा है। गणेश्वर ने **समति सोपान, छांदोग्य मंत्रोद्धार** एवं **गंगा पहलक** में अपने को महाराजाधिराज, महामत्तक तथा महासामंत तक कहा है। "महाराजाधिराजस्य महासामन्तपालिनो महामत्तकेशस्य श्री गणेश्वर.....।" सिमरैनगढ़ की यह ऐतिहासिक सूर्यमूर्त्ति पाल शैली की परम्परा में निर्मित है, न कि नेपाल की। किंतु अन्धराठाढ़ी के कमलादित्य स्थान में रक्षित लक्ष्मी नारायण की खंडित मूर्त्ति के अभिलेखयुक्त पादपीठ को कर्णाटकालीन मूर्त्तिकला का प्रस्थान बिन्दु कहा जाना अधिक श्रेयस्कर है। लक्ष्मी-नारायण की इस ऐतिहासिक मूर्त्ति की स्थापना श्रीधर ने की थी। अभिलेख में कर्णाट राजवंश के संस्थापक नान्यदेव को

'जेता' और श्रीधर को 'मंत्री' कहा गया है। ''श्री मन्नान्यपतिर्जेता गुण रत्न महार्णवः यत्कीर्ति जनितो विश्वे द्वितीयः क्षीरसागरः मन्त्रिणा तस्य नान्यस्य क्षत्र वंशाब्ज भानुना, देवाऽयम् कारितो येन श्रीधरः श्री चेरण च।।''[6] यह मूर्त्ति-अभिलेख कर्णाटकालीन शौर्य, पाण्डित्य, संस्कृत भाषा, मूर्त्तिकला, तिरहुता लिपि तथा वैष्णवत्व को प्रमाणित करता है। नान्यदेव ने लक्ष्मण सेन को पराजित कर कर्णाट राजवंश की स्थापना की थी। श्रीधर लक्ष्मण सेन के महामांडिलिक थे। लक्ष्मण सेन पर विजय के पश्चात श्रीधर कर्णाट राजवंश की सेवा में आये। नान्यदेव का पाण्डित्य उनके **सरस्वती हृदयालंकार** तथा **ग्रंथमहार्णव** एवं श्रीधर का उनके **सदुक्ति कर्णामृत** तथा **काव्य प्रकाश विवके** में संचित है। मूर्त्ति अभिलेख को तिरहुता को ''की स्टोन आफ मिथिलाक्षर" कहा गया है।

अन्धराठाढ़ी के कमलादित्य (लक्ष्मी-नारायण) के ध्वंसावशेषों में काले पत्थर के एक कलात्मक चौखट के अधोभाग में मकरवाहिनी गंगा, कुबेर तथा लक्ष्मी और दूसरे चौखट में कच्छपवाहिनी यमुना और सूर्य की मूर्त्तियाँ उत्कीर्ण हैं। यहाँ से प्राप्त एक कलात्मक विष्णु- मूर्त्ति के पार्श्व में लक्ष्मी और सरस्वती की मूर्त्तियाँ बनी हैं। ये मूर्त्तियाँ कणार्ट मूर्त्तिकला के आधारभूत केन्द्र हैं जहाँ से इसकी विकास यात्रा शुरू होती है। स्पूनर[7] ने सिमरौनगढ़ के कंकाली मंदिर को तिरहुत शैली के मंदिरों में परिगणित किया है। इस शैली के मंदिर के आगे द्वार-मंडप की रचना की जाती है। मखनाहा (जनकपुर क्षेत्र) का मंदिर इसी शैली में बना है, जो कर्णाटकालीन तिरहुत शैली के मंदिर स्थापत्य का जीता-जागता नमूना है। भीठ भगवानपुर, कपिलेश्वर, बहेड़ा, देकुली (शिवहर), तिलकेश्वर आदि स्थलों से कर्णाटकालीन मंदिरो के ध्वंसावशेष प्राप्त हुए हैं। इन मंदिरों में पत्थर एवं ईटों का मिला-जुला प्रयोग हुआ है।

नेपाली स्रोतों में कर्णाट शासकों का क्रम निम्नरूपेण उल्लिखित है - 1. नेपालवंशावली में नान्यदेव-अर्जुनदेव-नरसिंह देव - रामसिंहदेव-हरसिंह देव। 2. केसर पुस्तकालय की वंशावली में, नान्यदेव- गंगदेव-नरसिंह देव - रामसिंहदेव- भवसिंह देव - कर्मसिंहदेव - हरसिंहदेव। 3. प्रताप मलय के शिलालेख में - नान्यदेव - गंगदेव - नरसिंहदेव - रामसिंहदेव - शक्तिसिंह - भूपाल सिंह - हरसिंह। डॉ॰ योगेन्द्र मिश्र[8] ने कर्णाटों का शासन क्रम इस प्रकार निर्धारित किया है : - 4. नान्यदेव (1097-1147 ई॰) - गंगदेव (1147-1188 ई॰) - नरसिंह देव (1188-1227 ई॰), रामसिंहदेव (1227-1285) - शक्तिसिंह/शक्रसिंह (1285-1303 ई॰) एवं हरसिंहदेव (1303-1324 ई॰)। राधाकृष्ण चौधरी ने नान्यदेव के दो पुत्रों का उल्लेख किया है - गंगदेव और मल्लदेव। गंगदेव सिमरौनगढ़ में नान्यदेव के उत्तराधीकारी हुए और मल्लदेव ने भीठ भगवानपुर (मधुवनी) में अपनी राजधानी बनायी। वहाँ के मंदिर स्थापत्य के कलात्मक द्वार-खण्डों के साथ लक्ष्मी नारायण के प्रतिमालेख में अंकित है - ओम श्री मल्ल देवस्य"।[9] विद्यापति ने **पुरुष परीक्षा** में मल्लदेव का उल्लेख किया है। देकुली, बहेड़ा तथा भीठभगवानपुर के ध्वस्त मंदिरों के अवशेषों के देखने से यह स्पष्ट हो जाता है कि कर्णाट ने पूर्वी

भारतीय मंदिर स्थापत्य की परम्परा के विकास में अपना उल्लेखनीय योगदान दिया। भीठभगवानपुर से प्राप्त शिव-पार्वती, विष्णु, गणेश, दुर्गा आदि की प्रस्तर मूर्त्तियों के कलात्मक विन्यास का साक्षात विद्यापति साहित्य में होता है। देकुली के शिव वर्धमानेश्वर मंदिर में गंगदेव के धर्माध्यक्ष वर्धमान उपाध्याय का अभिलेख रक्षित है – ''जातोवंशे विल्वपञ्चाभिधाने धर्माध्यक्षो वर्धमानो भवेशात्।''[10] तिलकेश्वर और हाबी में नरसिंहदेव एवं रामसिंहदेव के मंत्री कर्मादित्य थे। मंदिर अभिलेख में[11] रानी सौभाग्यवती, मंत्री कर्मादित्य एवं हैहदूदेवी भगवती का नामोल्लेख हुआ है। इससे तिलकेश्वर और हावी में कर्णाटकालीन भगवती मंदिर का संकेत प्राप्त होता है। तिलकेश्वर से प्राप्त वराह एवं विष्णु की प्रस्तर प्रतिमाएँ सम्प्रति चंद्रधारी संग्रहालय, दरभंगा में संरक्षित हैं। कपिलेश्वर के कर्णाटकालीन ध्वस्त शिव मंदिर से प्राप्त सद्योजात की कलात्मक मूर्त्ति की विवरणी जनकल शर्मा ने[12] दी है। अठारह ईंच लम्बी तथा बारह ईंच चौड़ी यह मूर्त्ति सम्प्रति राम मंदिर (जनकपुर धाम, नेपाल) में सुरक्षित है। शैव सम्प्रदाय की इस प्रतिमा में पार्वती पलंग पर आराम से बायें हाथ की केहुनी के नीचे तकिया के सहारे लेटी है। दाहिने हाथ में कमल पुष्प है। एक दासी पायताने में दाहिने पैर को गोद में रखकर उनकी सेवा कर रही है। दूसरी दासी हाथ में पंखा लिए हवा कर रही है। पार्वती के बगल में नवजात शिशु लेटा है। शिशु के पैर कमल के फूल पर है। पलंग के पीछे जलढ़री सहित शिवलिंग, गणेश, कार्त्तिकेय और षोड़शोपचार की सामग्रियाँ रखी हैं। सद्योजात की अबतक प्राप्त मूर्त्तियों में यह सर्वांग सुंदर है। इस प्रकार की अनेक मध्यकालीन मूत्तियाँ राजशाही, ढाका, कलकत्ता, पटना आदि के संग्रहालयों में है। नेपाल की इस मूर्त्ति के सिर, गला, बाँह, कलाई, कमर और पैरों में आभूषण हैं। अधोवस्त्र के रूप में वह बेल-बूटों से सुसज्जित साड़ी पहने हुई है। इन वाह्य अलंकारों की चकाचौंध में मूर्त्ति का आंतरिक सौन्दर्य प्रायः गौण हो जाता है।

रामनिवास पाण्डेय[13] ने जनकपुर क्षेत्र के कर्णाटकालीन मखनाहा के शिव मंदिर के गर्भगृह में स्थित नृत्यमुद्रा में अष्टभुजी शिव मूर्त्ति तथा भुतही गाँव से प्राप्त विष्णु की प्रतिमा को कर्णाट मूर्त्ति शैली का उत्कृष्ट उदाहरण कहा है। मखनाहा का शिव मंदिर निःसंदेह कर्णाटों की तिरहुत शैली में बना है तथा नटेश्वर शिव की मूर्त्ति पर दक्षिणात्य प्रभाव स्पष्ट है। भुतही की विष्णु- मूर्त्ति सिमरौनगढ़ की कर्णाट शैली में बनी है। सिमरौनगढ़ के कंकाली मंदिर परिसर में विष्णु की बड़ी-बड़ी मूर्त्तियों के अतिरिक्त उमा-माहेश्वर, दुर्गा, हनुमान, आयुधपुरुष आदि की मूर्त्तियाँ कर्णाट-मूर्त्ति-शिल्प के उत्कृष्ट उदाहरण हैं। लेकिन सिमरौनगढ़ की ख्याति जिस कंकाली भगवती को लेकर है, उसकी आयुध और वाहन-विहीन खंडित मूर्त्ति गर्भगृह में स्थित है। परिसर की विशिष्ट मूर्त्तियों में आयुध पुरुष की एक आदमकद प्रतिमा है, जिसकी पहचान नहीं हो पायी है। संभवतः यह कर्णाट वंश के सर्वप्रतापी राजाओं में नान्यदेव या हरसिंह देव की है। मूर्त्ति, वीरोचित भंगिमा में बनी है। बायें कमर में कटार लटक रही

है। यहाँ की मूर्त्तियों का सिरोभाग अलग से मुकुट लगाने के लिए सपाट रखा गया है। कर्णाट मूर्त्तियों की यह विशिष्ट पहचान है जो मात्र सिमरौनगढ़ में ही प्राप्त होती है। कर्णाटों के प्रतापी राजा हरसिंहदेव और मंत्री चाण्डेश्वर का प्रभुत्व नेपाल उपत्यका तक था।

कर्णाट मूर्त्तिकला का विकास मिथिलांचल के देकुली (दरभंगा), केओसा (समस्तीपुर), जयनगर (मधुबनी), तिलकेश्वर (दरभंगा), मुक्तेश्वर (मधुबनी) आदि जगहों में स्पष्ट रूपेण देखा जा सकता है। मोहन प्रसाद खनाल ने परवर्ती कर्णाटों का दोलखा (नेपाल) में शासन का प्रमाण मूर्त्ति अभिलेखीय आधार के साथ प्रस्तुत किया है।[14] दोलखा से पन्द्रहवीं-सोलहवीं सदी की प्राप्त मूर्त्तियों में उमा-माहेश्वर (1420, 1554 ई०), नारायण (1447, 1482, 1560, 1569 ई०), दामोदर (1554), बुद्ध एवं तारा (1585 ई०), भैरव (1554, 1585 ई०) आदि उल्लेखनीय हैं। कर्णाट शासकों में उज्योतदेव, उद्धवदेव, नन्ददेव, इन्द्र सिंहदेव, जितादेव एवं भीष्मदेव नाम मूर्त्तिकला के विकास के संदर्भ में महत्वपूर्ण माने जा सकते हैं।

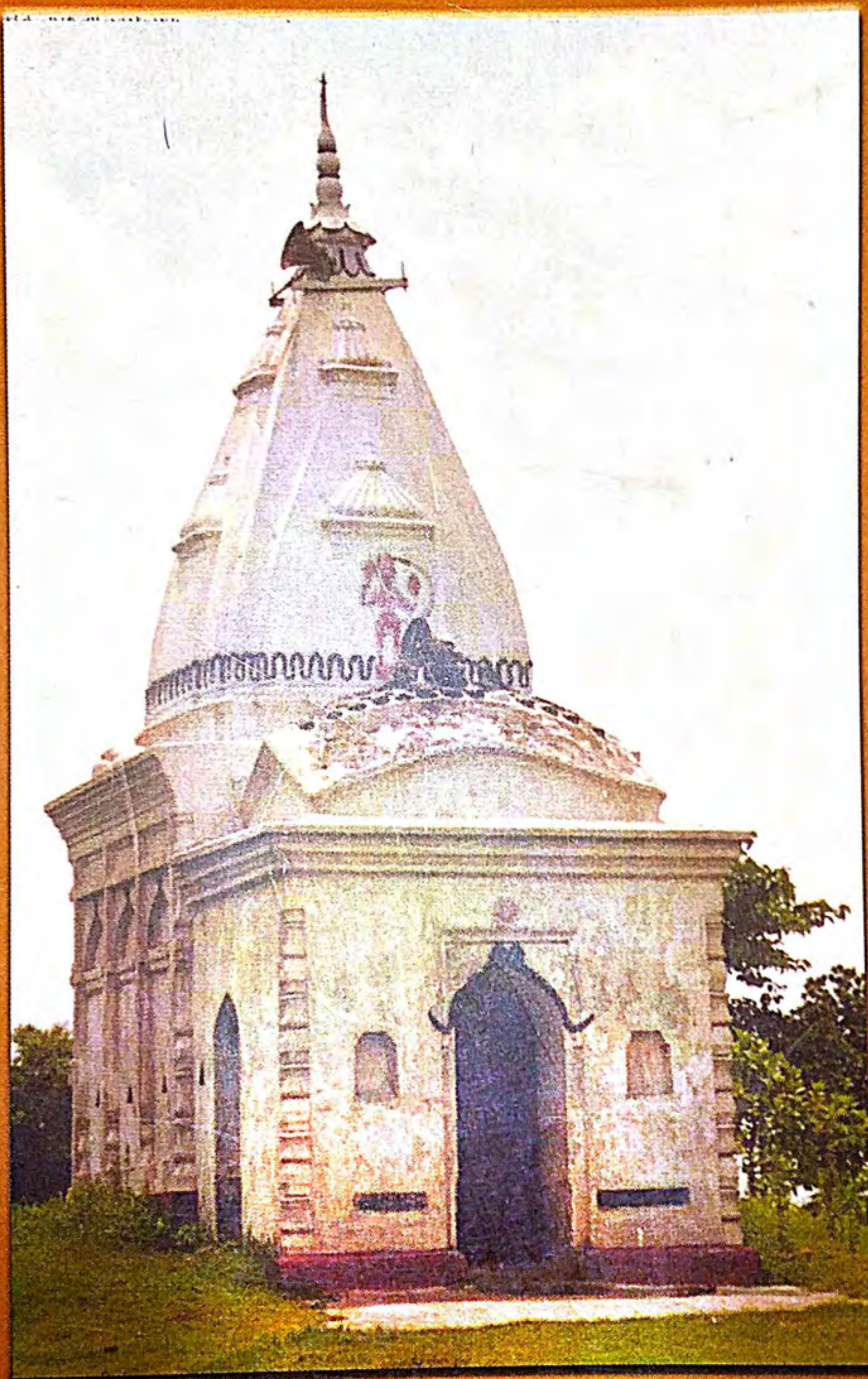
कर्णाट राजाओं ने पाल और सेन शासकों से विरासत में प्राप्त कला शैली का विकास एवं विस्तार किया। हिन्दू धर्मावलम्बी होने के कारण कर्णाटों ने मुख्यत: शिव एवं विष्णु मंदिरों का निर्माण किया। इनके अतिरिक्त इन शासकों द्वारा स्थापित भगवती मंदिरों में सिमरौनगढ़ की कंकाली, हाबी की हैहद् देवी भगवती तथा काठमाण्डू की तुलजा भगवती के मंदिर विशिष्ट हैं। हरसिंहदेव ने अपनी कुलदेवी तुलजा की स्थापना काठमाण्डू में की थी। इस प्रकार क्षेत्र से दो धाराओं - नेपाल तथा मिथिला शैलियों में विकसित हुई। नेपाल में कर्णाट कला का वसान मल्लकालीन कला शैली में तथा मिथिला में ओइनवार कला शैली में हुआ। इस कला में बनी विष्णु प्रजापालक, लोकपाल एवं भक्ति के आश्रय के रूप में भगवती सिद्धिदायी के रूप में, शिव मोक्षदाता के रूप में तथा बुद्ध उद्धारक के रूप में मूर्त्त हुए। लक्ष्मीनारायण और उमा-माहेश्वर की प्रतिमाएँ सर्वाधिक लोकप्रिय थीं। सिमरौनगढ़, मूर्त्तिया, भुतही, आदि (नेपाल) तथा अन्धराठाढ़ी, भीठभगवापुर देकुली (भारत) आदि स्थलों की पहचान कर्णाट मूर्त्तिकला के प्रमुख केन्द्रों के रूप में की जा सकती हैं।

संदर्भ

1. भुवनेश्वर गुरमैता, **वर्ण रत्नाकरक ऐतिहासिक पृष्ठभूमि**, वैदेही (दरभंगा), अप्रैल-मई 1965 ई०।
2. उपेन्द्र ठाकुर, **हिस्ट्री ऑफ मिथिला**, दरभंगा, 1956, पृ० 241.
3. 'मिथिला की सांस्कृतिक चिनारी' **सिंहावलोकन** (विशेषांक), जनकपुरधाम, नेपाल, 2046 वि०।
4. रोरिक, **वायोग्राफी ऑफ धर्मस्वामिन**, पटना, 1959 ई० पृ० 58.

5. श्री तारानंद, **प्राचीन नेपाल** - 24, (पुरातत्व विभाग, नेपाल), काठमाण्डू, 1973 ई०।
6. ललित कुमुद, **कर्ण कायस्थक सारस्वत साधना**, अंधराढाढ़ी, 1973 ई०।
7. स्पूनर, 'तिरहुत टाइप ऑफ टेंपल', जे० बी० ओ० आर० एस०, 2.
8. योगेन्द्र मिश्र, **श्वेतपुर की खोज और उसका इतिहास**, पटना, 1979 ई०।
9. राधा कृष्ण, **श्वेतपुर की खोज और उसका इतिहास**, पटना, 1979 ई०।
10. पूर्वोक्त, पृ० 264.
11. राधाकृष्ण चौधरी, ' मिथिलाक सांस्कृतिक इतिहास.' **वैदेही** (विशेषांक), 1963, पृ० 73.
12. जनक लाल शर्मा, 'सद्योजात', **प्राचीन नेपाल**, 128-129, 1992 ई०।
13. सिंहावलोकन (विशेषांक), जनकपुरधाम, 2046 वि०।
14. मोहन प्र० रवनाल, **नेपाल का केही मल्लकालीन अभिलेख**, काठमाण्डू, 2029 वि०; **दोलखाको संक्षिप्त इतिहास**, काठमाण्डू, 2029 वि०।

Art and Archaeology of Mithila



Directorate of Archaeology

Dept. of Art, Culture and Youth, Bihar, Patna

Art and Archaeology of Mithila

Chief Editor
S.K. Sinha
Director, Archaeology, Bihar

Editors
Dr. Atul Kumar Verma
Dr. Kumar Anand
Dr. S.K. Jha

Directorate of Archaeology
Dept. of Art, Culture & Youth, Bihar
2006

Contents

Archaeology Section

Art Section